समुल्लास
९
पर
ाधारित

ओ३म्

सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थमाला

स्वर्ग और नरक कहाँ है?

सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी प्रकाशन

Scanned with CamScanner

प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले द्वारा संपादित

सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थमाला के

१५ पुष्प और उनके लेखक

भाग	नाम	लेखक का नाम	मूल्य
1.	ईश्वर एक नाम अनेक	प्रो. बुद्धि प्रकाश आर्य	0.60
2.	आदर्श माता-पिता	प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु	0.40
3.	शिक्षा और चरित्र निर्माण	प्रो. भूदेव शास्त्री	0.70
4.	गृहस्थाश्रम का महत्त्व	आचार्य ओंकार मिश्र प्रणव	0.70
5.	संन्यासी कौन और कैसे हो?	रासासिंह विद्यावाचस्पति	0.40
6.	राज्य व्यवस्था	प्रो. प्रशान्त कुमार वेदालंकार	1.10
7.	ईश्वर और वेद	डा. सूर्यदेव शर्मा एम, ए., एल. टी. डी. लिट्	1.00
8.	जगत् की उत्पत्ति	डा. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती	0.70
9.	स्वर्ग और नरक कहां है ?	सिद्धांत भास्कर पं. यशपाल आर्य बन्धु	0.60
10.	चौके चूल्हे में धर्म नहीं है ?	प्रो. देव शर्मा वेदालंकार	0.60
11.	हिन्दू धर्म की निर्बलता	प्रो. भवानी लाल भारतीय	0.90
12.	बौद्ध और जैन मत	पं मंजुनाथ शास्त्री	0 50
13.	वेद और ईसाई मत	श्री रामस्वरुप जी रक्षक	0 50
14.	इस्लाम और वैदिक धर्म	डा. श्रीराम आर्य	0 80
15.	सत्य का अर्थ तथा प्रकाश	प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले	0.50
			10=00

अन्य प्रकाशन

*देश धर्म और हिन्दू समाज को आर्य समाज की देन	— प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले	0.20
आचार संहिता		0 60
**धर्म शिक्षा (1 से 11 भाग)		31.00
*राष्ट्रीय चरित्र और एकता	प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले	2 00

नोट:— 50 या अधिक प्रतियां एक साथ मंगाने पर 25 प्रतिशत कमीशन देय।

प्राप्ति स्थान

आर्य समाज, अजमेर

Scanned with CamScanner



सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थमाला—भाग ६

स्वर्ग और नरक कहां है ?

लेखक :
सत्यार्थ भास्कर यशपाल आर्य बन्धु
मुरादाबाद



सम्पादक :
दत्तात्रेय वाब्ले
भू० पू० प्रिंसिपल, दयानन्द स्नातकोत्तर कॉलेज, अजमेर

प्रकाशक : आर्य समाज, अजमेर

द्वितीय संस्करण

आर्य समाज शताब्दी वर्ष 1982 } प्रतियाँ 5000 { मूल्य 60 पैसे

Scanned with CamScanner

डॉ० सूर्यदेव शर्मा का प्रशंसनीय अनुदान

आर्य समाज के जाने माने विद्वान् और प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री तथा आर्य समाज अजमेर के दीर्घकालीन यशस्वी मंत्री डॉ. सूर्यदेव शर्मा, शास्त्री साहित्यालंकार, एम. ए., एल. टी., डी. लिट् ने 1981 में सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी के अवसर पर इस ग्रन्थमाला के प्रथम संस्करण के लिये 12 हजार रुपये तथा आर्य समाज अजमेर की 1982 में शताब्दी के उपलक्ष में प्रकाशित इस द्वितीय संस्करण के लिये 10 हजार रुपये, इस प्रकार कुल 22 हजार (बाईस हजार रुपये) रुपये की राशि दान में देकर ऋषि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार में अनुकरणीय सहयोग दिया है। आर्यसमाज अजमेर और मैं उनका हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।

दत्तात्रेय वाब्ले
प्रधान
आर्य समाज, अजमेर

यह पुस्तक भारत सरकार द्वारा रियायती मूल्य पर प्राप्त कागज पर छापी गई है।

*

मुद्रक : श्री आर्य प्रिण्टर्स, बाबू मोहल्ला केसरगंज, अजमेर

Scanned with CamScanner

प्रस्तावना

दुखों से मुक्ति और सुखों की प्राप्ति का ही नाम स्वर्ग है। ऋषि दयानन्द का यह मन्तव्य धार्मिक जगत् को उनकी एक अद्भुत और सर्वथा नवीन देन है। प्रायः सब धर्म स्वर्ग और नरक को स्थान विशेष मानते हैं। उनका विश्वास है कि स्वर्ग में हमें वे सब सुख मिलते हैं जिनकी हम जीवन में इस लोक में उत्कृष्ट इच्छा और कल्पना करते हैं और नरक में कष्ट और यातनाएँ दी जाती हैं, जिनका विचार मात्र ही हमें भयभीत कर देता है। स्वर्ग और नरक की यह कल्पना इतनी पुरानी और कपोल-कल्पित है कि आकाश और पाताल की गहराइयों के रहस्य को खोजने में समर्थ तथा चन्द्र-लोक की यात्रा करने वाला वैज्ञानिक युग का आज का मानव उसे स्वीकार नहीं कर सकता। यही कारण है कि आज न उसे ऐसे स्वर्ग का आकर्षण है, न नरक का भय। स्थान विशेष नहीं किन्तु स्थिति विशेष की स्वामीजी की कल्पना इसीलिये सर्वथा तर्क-सम्मत है और उसका सम्बन्ध संसार के शारीरिक सुखों से न होकर आत्मा के उस परमानन्द से है जो संसार के समस्त सुखों और वैभवों से अधिक आनन्ददायक है।

मोक्ष क्या है ?

मुक्ति या मोक्ष तथा स्वर्ग या नरक की चाहे जो कल्पना हम स्वीकार करें वह जीव की मुक्ति या मोक्ष के दार्शनिक सिद्धान्त पर आधारित है जिसका अत्यन्त सुन्दर और तर्कपूर्ण विवेचन ऋषि दयानन्द ने अपने सत्यार्थ प्रकाश के नवें समुल्लास में किया है। इस पुस्तिका के

Scanned with CamScanner

विद्वान् लेखक ने मुक्ति या मोक्ष जैसे जटिल दार्शनिक सिद्धान्त का इसी समुल्लास के आधार पर सरल और सुगम भाषा में सुन्दर विवेचन किया है। मोक्ष क्या है? उसका स्वरूप और अवधि क्या है? मोक्ष में शरीर रहित आत्मा किस प्रकार आनन्द का अनुभव करती है? जीवात्मा और परमात्मा के मेल का क्या अर्थ है? मोक्ष प्राप्ति के बाद जीवात्मा पुनः जन्म लेता है या नहीं? मोक्ष में जीव की क्या स्थिति होती है? वह कहाँ रहता है? आदि दार्शनिक प्रश्नों का इसमें अत्यन्त सन्तोषजनक उत्तर दिया है।

दामोदर वाले

सम्पादक

लेखक का संक्षिप्त परिचय

इस पुस्तिका के लेखक श्री यशपाल आर्य बन्धु सुवक्ता एवं विद्वान् लेखक हैं। आपने कई स्मारिकाओं का संपादन कार्य किया है तथा आर्य पत्र पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित कर आर्य जगत् का मार्ग दर्शन किया है। आप एक दर्जन से भी अधिक पुस्तकों के प्रणेता हैं। लेखनी और वाणी दोनों पर समान रूप से आप का अधिकार है।

Scanned with CamScanner

स्वर्ग और नरक कहाँ है

मोक्ष मीमांसा

सत्यार्थ प्रकाश उन्नीसवीं शताब्दी के धार्मिक एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण के अग्रदूत महर्षि दयानन्द सरस्वती का अनुपम ज्ञानकोष है। जिस प्रकार अंकों में नौ का अंक पूर्णता का द्योतक है, उसी प्रकार सत्यार्थ प्रकाश का नवम समुल्लास भी मानव-जीवन के चरम उत्कर्ष (परमपद प्राप्ति) का प्रतिपादक है। महर्षि ने इसमें मानव-जीवन के चरम लक्ष्य मोक्ष के स्वरूप, स्थिति, साधन आदि की ऐसी सुन्दर सारगर्भित मार्मिक विवेचना प्रस्तुत की है कि जो पढ़ते ही बनती है। मोक्ष जैसे जटिल विषय की विवेचना भी कोई ऋषि या योगी ही कर सकता है। महर्षि दयानन्द उन्नीसवीं शताब्दी के महान् योगी थे। अतः उन्हें इस विषय की विवेचना करने का पूर्ण अधिकार था। उसी योगी द्वारा प्रस्तुत "मोक्ष-मीमांसा" को सरल रूप में प्रस्तुत करने का यह छोटा सा प्रयास है।

महर्षि दयानन्द की लेखन शैली

महर्षि दयानन्द ने मोक्ष जैसे जटिल, गम्भीर दार्शनिक विषय की विवेचना के लिए प्रश्नोत्तर शैली को उपयुक्त समझ

Scanned with CamScanner

कर अपनाया था। यदि महर्षि इस शैली को न अपनाते तो स्यात् यह विषय इतनी सरलता से नहीं समझा जा सकता था। वैज्ञानिक पद्धति के अनुरूप महर्षि दयानन्द ने इसमें क्या, क्यों, कैसे आदि शंकायें उठाकर उनका श्रेष्ठतम प्रमाणों से पुष्ट युक्तियुक्त वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत किया है। यही इसकी विशेषता है।

महर्षि दयानन्द की मोक्ष सम्बन्धी विचारधारा का आधार

महर्षि दयानन्द की मोक्ष सम्बन्धी विचारधारा का मुख्य आधार वेद है जो स्वतः प्रमाण एवं ईश्वरीय ज्ञान है। उन्होंने वेद की विचारधारा को ही अपनी विचारधारा के रूप में अंगीकार किया है। वेद-प्रतिपादित होने से ही उनकी विचारधारा तर्कसम्मत वैज्ञानिक विचारधारा बन पाई।

मोक्ष किसे कहते हैं ?

मोक्ष के स्वरूप आदि की विवेचना करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि मोक्ष या मुक्ति कहते किसे हैं ? उसका अर्थ और परिभाषा क्या है ? मोक्ष, मुक्ति, कैवल्य, परम-धाम आदि शब्द प्रायः एक ही भाव के द्योतक हैं। सामान्यतः इनका अर्थ बन्धन अर्थात् जन्म-मरण आदि के दुःख रूप चक्र से छुटकारा पाना ही लिया जाता है और ऐसी ही परिभाषा भी दी जाती है। किन्तु ऋषि दयानन्द इसे अपने ही ढंग से

Scanned with CamScanner

परिभाषित करते हैं। मुक्ति किसे कहते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में महर्षि लिखते हैं कि "मुंचन्ति पृथग्भवन्ति जनाः यस्यां सा मुक्तिः जिससे छूट जाना हो उसका नाम मुक्ति है।" अब यहां प्रश्न उठता है कि किससे छूटने का नाम मुक्ति है ? महर्षि के अनुसार इसका उत्तर इस प्रकार है—"जिससे छूटने की इच्छा सब जीव सदा करते हैं।" और "सब जीव किससे छूटने की इच्छा करते हैं ? उत्तर एक ही है कि "दुःख से"। दुःख कोई नहीं चाहता, फिर भी प्राणीमात्र दुःखी है। मानव जीवन की मुख्य समस्या दुःखों से छुटकारा पाना है। भारतीय दार्शनिक तत्त्व-चिन्तन की यह अपनी विशेषता रही है कि उसमें मानव जीवन की मुख्य समस्या "दुःख" को सुलझाने के प्रयत्नों को सदा प्रमुखता दी गई है। चाहे तो वह ईश्वरवादी दार्शनिक हो या अनीश्वरवादी दार्शनिक, प्रत्येक ने अपने-अपने ढंग और दृष्टिकोण से इसे सुलझाने का भरसक प्रयत्न किया है। यह और बात है कि किसी का लक्ष्य भौतिक सुखों की प्राप्ति तक ही सीमित हो और दुःखों के अत्यन्त अभाव के स्थान पर क्षणिक अभाव तक सीमित रहा हो, पर यह सत्य है कि सभी का ध्यान उसी एक समस्या के सुलझाने में ही लगा रहा है।

यह दुःख जो प्राणीमात्र को अप्रिय है, एवं मनुष्य जो कि "मननान्मनुष्यः" के अनुसार मननशील, विवेकशील प्राणी है एवम् उसकी यह प्रमुख समस्या है– अन्ततः है क्या ? शास्त्र इसे 'प्रतिकूलवेदनीयं दुःखम्' कहकर प्रकट करता है। पर

Scanned with CamScanner

यदि मोटी भाषा में कहना हो तो दुःख का सामान्य लक्षण यह है कि जिससे पीड़ित होकर अथवा पीड़ित होने की सम्भावना से प्राणी उसके नाश करने का प्रयत्न करता है। दुःख कोई नहीं चाहता। प्रत्येक प्राणी की यह तीव्र इच्छा रहती है कि मैं दुःख से बचूं और सुख को प्राप्त करूं। पर देखा यह गया है कि कभी न चाहते हुये भी दुःख प्राप्त हो जाते हैं और कभी चाहते हुये भी सुख नहीं मिल पाते। ऐसा क्यों होता है? इसीलिये कि दुःख की कामना न करने मात्र से दुःख दूर नहीं हो जाता जबकि उसके कारण विद्यमान हों और केवल कामना करने मात्र से ही सुख नहीं मिल सकता जबकि उसके कारणों का सर्वथा अभाव ही हो। आज हमारी स्थिति यह है कि हम कारण का तो नाश करते नहीं पर दुःख का नाश करने की बात सोचने लगते हैं। विपरीत इसके सुख के कारणों को तो उत्पन्न करते नहीं और सुख की कामना करने लग जाते हैं। सत्य है—पुण्यस्य फलमिच्छन्ति पुण्यनेच्छन्ति जन्तवः। न पापफलमिच्छन्ति पाप कुर्वन्ति यत्नतः॥

क्या दुखों के नाश मात्र का ही नाम मोक्ष है?

जैसा कि पूर्व भी लिख आये हैं कि मानव-जीवन का चरम लक्ष्य दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति है। पर क्या दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति मात्र का ही नाम मोक्ष है? और क्या मोक्ष में अभाव ही अभाव है, या कुछ भाव भी है? महर्षि दयानन्द दुःखों के

Scanned with CamScanner

मात्र अभाव को ही मोक्ष की संज्ञा नहीं देते। वे दुःखों के अत्यन्त अभाव के साथ-साथ परमानन्द की प्राप्ति भी मानते हैं। वह मोक्ष कि जिसमें परमानन्द की प्राप्ति और ब्रह्म का परम सान्निध्य नहीं, वस्तुतः मोक्ष हो ही नहीं सकता। इसी लिये महर्षि दयानन्द ने नवम समुल्लास में प्रश्नोत्तर रूप में अनेकों प्रश्नों द्वारा इसे स्पष्ट किया है। वहाँ महर्षि एक प्रश्न यह भी करते हैं कि "दुःख से छूट कर किस को प्राप्त करते हैं और कहां रहते हैं?" और फिर उत्तर में लिखते हैं कि "सुख को प्राप्त होते हैं और ब्रह्म में रहते हैं?" यहां सुख से महर्षि का तात्पर्य विशुद्ध शाश्वत सुख से है कि जिसे आनन्द की संज्ञा दी गई है। महर्षि यहां क्षणिक ऐन्द्रिय सुखों की चर्चा नहीं कर रहे। महर्षि जिस सुख की चर्चा कर रहे हैं, वह ऐसा सुख है कि जिसकी प्राप्ति केवल मोक्षावस्था में ही हो सकती है, बन्धनावस्था में नहीं। महर्षि दयानंद अपनी सुप्रसिद्ध पारिभाषिक शब्दावली की पुस्तक आर्योद्देश्य-रत्नमाला में मुक्ति की परिभाषा इन शब्दों में देते हैं—"जिससे सब बुरे काम और जन्म मरणादि दुःखसागर से छूटकर, सुखरूप परमेश्वर को प्राप्त होके, सुख में ही रहना है, वह मुक्ति कहाती है।" महर्षि की यह परिभाषा अपने में एक अद्भुत् समन्वयकारी विशेषता लिये हुऐ है। क्योंकि महर्षि दयानन्द के पूर्व के आचार्यों की परिभाषा में कहीं तो दुखों की अत्यन्त निवृत्ति का नाम मुक्ति कहा गया है तो कहीं परमानन्द की प्राप्ति का नाम। यद्यपि

Scanned with CamScanner

यह उन ऋषियों के कहने का अपना-अपना प्रकार अथवा ढंग ही था तथापि विशेष भेद न होते हुए भी प्रायः ऐसा समझा जाने लगा था कि इस विषय में वैदिक ऋषियों में मतभेद पाया जाता है। वैदिक दर्शनों में अविरोध के पक्षपोषक ऐक्य-वादी महर्षि दयानन्द ने दोनों विचारधाराओं का अति सुन्दर ढंग से समन्वय कर मोक्ष की ऐसी सुन्दर, सर्वांगपूर्ण दोषरहित परिभाषा प्रस्तुत कर दिखाई कि जिसमें विरोधाभास का जरा सा भी कहीं कोई अवकाश नहीं। महर्षि दयानन्द की यह परिभाषा प्राचीन ऋषियों की परिभाषाओं के विरोधाभास को ही समाप्त नहीं करती, उनकी अपूर्णता को भी पूर्णता प्रदान करती है। महर्षि दयानन्द की उक्त परिभाषा के आधार पर हम कह सकते हैं कि दुःखों की अत्यन्त निवृत्तिपूर्वक परमानन्द की प्राप्ति कर परब्रह्म में अव्याहत गति से विचरने का नाम ही मोक्ष है। वह मोक्ष, मोक्ष हो ही नहीं सकता जिसमें मुक्त जीव सर्वव्यापक परमात्मा और उसकी सृष्टि में अव्याहत गति से विचरण कर ही न सके।

मोक्ष का स्वरूप

मोक्ष के स्वरूप के विषय में अर्वाचीन दार्शनिकों में बहुत मतभेद व्याप्त हैं। कोई मोक्ष को अनन्त काल के लिए मानता है, तो कोई जीव का ही ब्रह्म में लय हो जाना मानता है। कोई मोक्ष के स्वरूप की कल्पना ही भौतिक सुखों की चरम सीमा के रूप में करते हैं तो कोई जीव का ही उसमें जड़वत् हो

Scanned with CamScanner

जाना मान बैठे हैं। तात्पर्य यह कि कोई कुछ तो कोई कुछ कह रहा है। इस सब झमेले में मोक्ष का वास्तविक स्वरूप तिरोहित होकर रह गया है। प्रश्न उठता है कि मोक्ष का यथार्थ स्वरूप क्या है? यद्यपि मोक्ष का स्वरूप पूर्व लिखे उसके अर्थ और परिभाषा से बहुत कुछ स्पष्ट हो चुका है, तथापि इस विषय में कोई शंका न रह जाय, इसलिये यहां इसे और भी स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं। मोक्ष का वास्तविक स्वरूप महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के इसी नवम समुल्लास में बड़े ही सुन्दर ढंग से दर्शाया है। मोक्ष के स्वरूप आदि के जिज्ञासु एवं मुमुक्षु जनों को महर्षि के इस ग्रन्थ का नौवां समुल्लास तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का सम्बन्धित प्रकरण अवश्यमेव ही पढ़ना होगा। उसके पढ़े बिना केवल इधर-उधर के ग्रन्थों के स्वाध्याय से मोक्ष सम्बन्धी पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति कभी भी नहीं हो सकती। महर्षि दयानन्द के अनुसार न तो मोक्ष में जीव का लय होता है और न ही उसका नाश। मोक्ष अनन्त काल के लिये भी नहीं होता। भौतिक सुख भौतिक साधनों अर्थात् इन्द्रियों के द्वारा ही भोगा जा सकता है पर जब मोक्ष में भौतिक शरीर रहता ही नहीं तो फिर भौतिक सुख के भोग का वहां प्रश्न ही नहीं उठता और यदि जीव जड़ हो जाता हो या उसका नाश ही हो जाता हो, तो फिर मोक्ष का आनन्द भोगेगा कौन? ऐसी स्थिति में फिर मोक्ष की कामना ही कौन करने लगा? महर्षि दयानन्द की

Scanned with CamScanner

सुस्पष्ट मान्यता है कि मोक्ष और बन्धन स्वभाव में नहीं होते, निमित्त से हुआ करते हैं। क्योंकि यदि स्वभाव से हों तो फिर उनकी निवृत्ति कभी भी नहीं हो सकती। जीव स्वभाव से मुक्त हो तो बन्धन में कभी आ नहीं सकता। इसी प्रकार यदि स्वभाव से बद्ध हो तो फिर वह कभी मुक्त ही नहीं हो सकता। कभी बन्ध तो कभी मुक्त, यही सिद्ध करता है कि जीव न स्वभाव से मुक्त है न बद्ध। मुक्त जीव सर्वत्र परिपूर्ण ब्रह्म में अव्याहत गति से आनन्दपूर्वक स्वच्छन्द विचरता है। शरीर आदि भौतिक अवयव न होते हुये भी वह अपनी आत्मिक शक्ति तथा शुद्ध संकल्प से ही परमानन्द को भोगता है। अतः कहना होगा कि मोक्ष का वैदिक स्वरूप वही है कि जिसमें शुद्ध गुण, कर्म, स्वभाव और अन्तःकरण युक्त जीव शुद्ध ज्ञान, कर्म, उपासना तथा योग एवं धर्म के सम्यक् अनुष्ठान द्वारा सभी कष्टों, दोषों, दुखों, सन्तापों, पीड़ाओं, वासनाओं एवं जन्म-मरण आदि के बन्धनों से छूटकर परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त होता है और उसमें अव्याहत गति से स्वच्छन्द विचरता हुआ परान्त-काल तक परमानन्द का उपभोग करता है और उसके पश्चात् पुनः जन्म धारण करता है, मानव योनि में।

मुक्ति से पुनरावृत्ति

पूर्व यह स्पष्ट किया जा चुका है कि मुक्त जीव एक निश्चित काल तक परमानन्द को भोगता है। इस काल को परान्तकाल या महाकल्प भी कहते हैं। इस अवधि तक वह मुक्त जीव मोक्ष

Scanned with CamScanner

के आनन्द को भोग कर पुनः मनुष्य योनि में जन्म धारण करता है, यह वेद का सिद्धांत है। इस सिद्धांत को मुक्ति से पुनरावृत्ति का सिद्धांत कहा जाता है। मुक्ति से पुनरावृत्ति का यह स्वर्णिम सत्य सिद्धांत महर्षि दयानन्द और उनके सर्वप्रसिद्ध ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश का एक प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण दार्शनिक सिद्धांत है। वैसे तो सम्पूर्ण सत्यार्थ प्रकाश ही दार्शनिक सिद्धांतों से भरा पड़ा है किन्तु विद्या-अविद्या और बन्ध-मोक्ष आदि की विशद विवेचना करने वाला यह नवम समुल्लास विशेष दार्शनिक रहस्यों से परिपूर्ण है। हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं कि महर्षि दयानन्द से पूर्व मुक्ति से पुनरावृत्ति की बात को इतने सुस्पष्ट शब्दों में रखने का साहस किसी में भी नहीं हो पाया। ऐसी घोषणा करने का साहस सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द ही जुटा पाये। अतः हम सत्यार्थप्रकाश के महान् लेखक महर्षि दयानन्द को इस सिद्धांत का प्रथम उद्घाटक अथवा उद्घोषक कह सकते हैं। यह दार्शनिक जगत् को महर्षि दयानन्द की एक बहुत बड़ी देन है। महर्षि दयानन्द की सुदृढ़ मान्यता है कि जीव एक निश्चत समय तक मुक्ति का आनन्द भोग कर पुनः माता-पिता के दर्शन करता अर्थात् जन्म धारण करता है। तात्पर्य यह कि महर्षि दयानन्द मुक्ति को अनन्त नहीं अपितु सान्त ही मानते हैं। तर्क महर्षि के पक्ष में जाता है और उन्होंने अपनी मान्यता की सिद्धि में इसका भरपूर लाभ भी उठाया है। मुक्ति को आज तक किसी ने भी अनादि नहीं माना।

Scanned with CamScanner

जिस क्षण जीव मुक्त होता है तभी से उसका आरम्भ हो जाता है। अर्थात् मोक्ष सादि है अनादि नहीं। तर्क का यह कथन है कि जो पदार्थ सादि होता है वह अवश्यमेव ही सान्त भी होता है। जिसका आदि नहीं, उसका अन्त भी नहीं। जिसका आदि है, उसका अन्त भी है। अतः सादि मोक्ष को अनन्त कैसे माना जा सकता है? महर्षि मुक्ति से पुनरावृत्ति में एक अन्य प्रबल तर्क उपस्थित करते हैं। वह यह—कि जीव की शक्ति, सामर्थ्य, ज्ञान, एवं साधन आदि सभी कुछ सीमित एवं परिमित हैं। फिर परिमित ज्ञान, सामर्थ्य एवं साधन आदि से सम्पन्न कार्यों का फल अनन्त अथवा असीम कैसे हो सकता है? महर्षि एक अन्य अकाट्य तर्क भी देते हैं कि जीवों के भोग का सामर्थ्य भी तो असीम या अनन्त नहीं। फिर स्वल्प सामर्थ्य वाला जीव असीम और अनन्त आनन्द का भोग ही कैसे कर सकता है। अतः तर्क यही कहता है कि मुक्ति सान्त ही होनी चाहिये, अनन्त नहीं। मुक्ति की सान्तता के विषय में महर्षि एक और प्रबल तर्क देते हैं कि यदि मुक्ति से पुनरावृति न हो तो जीवों का अत्यन्त उच्छेद हो जाना चाहिये, किन्तु ऐसा होता नहीं। इससे यही सिद्ध होता है कि मुक्ति से पुनरावृत्ति अवश्य होती है। सारांश यह कि मुक्ति चूंकि कार्य है इस लिये अनित्य है। अनित्य पदार्थ अनन्त नहीं हुआ करता।

मुक्ति से पुनरावृत्ति में प्रमाण

महर्षि दयानन्द ने मुक्ति से पुनरावृत्ति के सिद्धांत को केवल

Scanned with CamScanner

तर्क के आधार पर ही सिद्ध नहीं किया। अपने मत की पुष्टि वेद के आधार पर करते हैं। वेद चूँकि स्वतः प्रमाण है अतः उसके प्रमाणों के रहते अन्य किसी भी प्रमाण की आवश्यकता वे नहीं समझते। उन्होंने पुनरावृत्ति के समर्थन में वेद के निम्न मन्त्रों को उद्धृत किया है :—

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु नाम ।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च ।। 1 ।।
अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
स नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च ।। 2 ।।

यह दोनों ऋग्वेद प्रथम मण्डल के चौबीसवें सूक्त के प्रथम और द्वितीय मन्त्र हैं।

सामान्यतः लोग इसका अर्थ साधारण पुनर्जन्म के रूप में कर दिया करते हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि ये मुक्ति से पुनरावृत्ति के सुस्पष्ट उद्घोष हैं। प्रथम मन्त्र प्रश्न रूप में है तो दूसरा उत्तर स्वरूप। स्वामी जी इसका अर्थ करते हैं कि—

(प्रश्न) हम लोग किसका नाम पवित्र जानें ? कौन नाश रहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है। इसका हमको मुक्ति का सुख भुगा कर पुनः इस संसार में जन्म देता और माता तथा पिता का दर्शन कराता है ?

(उत्तर) हम इस स्वप्रकाशस्वरूप अनादि सदा मुक्त परमात्मा का नाम पवित्र जानें जो हमको मुक्ति में आनन्द भुगा कर पृथिवी में पुनः माता-पिता के सम्बन्ध में जन्म देकर

Scanned with CamScanner

माता-पिता का दर्शन कराता है। वही परमात्मा मुक्ति की व्यवस्था करता सब का स्वामी है।" महर्षि दयानन्द ने यहाँ वेद का प्रमाण देकर उपनिषद् के इन वचनों को सर्वथा निर्मूल कर दिया है कि जिनमें कहा गया है कि "न च पुनरावर्त्तते।" क्योंकि किसी भी आर्ष ग्रन्थ का प्रामाण्य तभी तक है कि जब तक वह वेद के अनुकूल हो। शंका होने पर वेद को ही परम प्रमाण माना जायेगा। महर्षि ने यहाँ परम प्रमाण का ही सहारा लिया है।

फिर अत्यन्त-अभाव से क्या तात्पर्य है ?

प्रश्न उठता है कि जब मुक्ति अनन्त नहीं तो फिर दुःखों के अत्यन्त-अभाव से क्या तात्पर्य है। क्या अत्यन्ताभाव शब्द मुक्ति से पुनरावृत्ति के सिद्धान्त में बाधक नहीं ? न्याय तथा सांख्यकार मोक्ष को दुःखों का अत्यन्त अभाव मानते एवं वर्णन करते हैं। अत्यन्त अभाव का अर्थ प्रायः लोग सदा के लिए अभाव—ऐसा कर दिया करते हैं। किन्तु महर्षि दयानन्द को यह अर्थ अभीष्ट नहीं। वे अत्यन्ताभाव का अर्थ सदा के लिये अभाव नहीं अपितु बहुत काल के लिये अभाव--ऐसा करते हैं। इसके लिये उनका कथन है कि "यह आवश्यक नहीं कि अत्यन्त शब्द अत्यन्ताभाव ही का नाम होवे। जैसे 'अत्यन्तं दुःखमत्यन्तं सुखं चास्य वर्तते' बहुत दुःख और बहुत सुख इस मनुष्य को है।" यहाँ यह शब्द काल की ओर संकेत न करके उसकी

Scanned with CamScanner

चरमता की ओर संकेत कर रहा है। अतः 'अत्यन्ताभाव' शब्द मुक्ति से पुनरावृत्ति के मानने में किसी प्रकार भी बाधक नहीं।

पुनरावृत्ति पर शंका

मुक्ति से पुनरावृत्ति के वैदिक सिद्धान्त पर कुछ लोग ऐसी शंका भी किया करते हैं कि जब मुक्ति की अवस्था में जीव के कभी कर्मों का क्षय हो जाता है एवं मुक्तावस्था में वह कोई नवीन कर्म करता ही नहीं तो फिर पुनरावृत्ति की दशा में किन कर्मों के आधार पर उसका पुनर्जन्म होगा? ऐसी ही शंका प्रायः पशु-पक्षी आदि निम्न योनियों से भी पुनरावर्त्तन के लिए भी की जाती है। क्योंकि मनुष्येतर अन्य योनियों में जीव केवल भोग ही भोगता है, नवीन कर्म नहीं करता, तो फिर जब पशु-पक्षी आदि निम्न योनियों में जीवकृत कर्मों के फल को भोग लेता है और वहाँ भी कोई नवीन कर्म सम्पादित नहीं करता तो फिर मनुष्य योनि में वह किस आधार पर आता है? इस बात को स्पष्ट करने के लिए हम एक उदाहरण प्रस्तुत करना आवश्यक समझते हैं। वह यह कि एक व्यक्ति किन्हीं अपराधों के कारण बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया जाता है। वह वहाँ पर अपने पूर्व कृत कुकर्मों का फल भोगता है और एक निश्चित अवधि तक बन्दी बनाये रखे जाने के बाद मुक्त कर दिया जाता है। यहाँ एक निश्चित अवधि पर ही जेल से मुक्त होने के लिए उस बन्दी को कोई नवीन कर्म अपेक्षित नहीं होते। जेल की अवधि पूरी हो जाने पर उसको मुक्त करना

Scanned with CamScanner

आवश्यक होता है। तात्पर्य यह कि जेल से मुक्त होने के लिए भी उसके वही कर्म हेतु हुआ करते हैं जिनके आधार पर उसको जेल भेजा गया था। ऐसे ही मोक्ष की अवस्था तथा पशु-पक्षियों आदि की अवस्था में भी समझना चाहिये। अपनी-अपनी अवधि पूरी होने के पश्चात् उनका लौट आना स्वाभाविक ही नहीं आवश्यक भी है। उसके लिए किन्हीं नवीन कर्मों के सम्पादन की आवश्यकता नहीं होती। पूर्व-कृत कर्मों के आधार पर ही जीव एक निश्चित अवधि तक मोक्ष का आनन्द भोग कर पुनः मनुष्य योनि में जन्म धारण करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पुनरावृत्ति होने पर मानव-जन्म धारण करने का आधार पूर्व कर्म ही हैं जो मुक्ति का कारण बने थे।

एक आपत्ति

मुक्ति का वैज्ञानिक विवेचन करते हुए सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने कई एक शंकायें विकसित कर उनका युक्तियुक्त सत्य समाधान प्रस्तुत किया है। वहाँ एक आपत्ति यह भी उठाई गई है कि जब मुक्ति से लौटकर पुनः आना ही है तो फिर उसके पाने के लिये व्यर्थ को इतना श्रम क्यों किया जाये? मोक्ष को पाने के लिये किया जाने वाला श्रम कोई मामूली श्रम तो है नहीं। कई-कई जन्मों की लगातार कठोर साधना से जीव मोक्ष को प्राप्त करने में सफल हो पाता है। इतना श्रमसाध्य मोक्ष भी यदि अनित्य हा तो फिर

Scanned with CamScanner

उसकी प्राप्ति के लिए इतना श्रम क्यों किया जाये ? महर्षि ने इस शंका की उपेक्षा नहीं की और अपनी अनुपम तर्कणा शक्ति एवं अनोखी सूझ-बूझ से इस आपत्ति का बड़ा ही युक्तियुक्त मार्मिक उत्तर दिया है अपने इस ग्रन्थ के नवम समुल्लास में जो वस्तुतः पढ़ने से ही सम्बन्ध रखता है। महर्षि वहाँ लिखते हैं कि जब हम प्रातः भोजन करते हैं फिर भी सायंकाल को भूख लग ही जाती है। ऐसी स्थिति में भी कोई क्षुधा-निवृत्ति के उपायों से उपराम नहीं होता, अपितु उसकी निवृत्ति के लिये सदैव प्रयत्नशील ही रहते हैं। जब बार-बार भूख लगने पर भी उसकी निवृत्ति के उपाय व्यर्थ नहीं समझते तो फिर कल्पनातीत काल के लिये मोक्षानन्द की प्राप्ति के लिए किया जाने वाला श्रम व्यर्थ कैसे हो सकता है ? जब हम क्षणिक सुखों के लिये किये जाने वाले श्रम को व्यर्थ नहीं समझते अपितु उनकी प्राप्ति के लिए दिन-रात एक किये रहते हैं तो फिर परमानन्द की प्राप्ति के लिए श्रम व्यर्थ क्योंकर हो सकता है ? यह जानते हुए भी कि जीवन क्षणभंगुर है लोग जिन्दा रहने के लिए मरे जाते प्रतीत होते हैं तो फिर मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयत्न व्यर्थ कैसे हो सकता है ? अतः यह आपत्ति सर्वथा निराधार है कि जब मुक्ति से लौटकर आना ही है तो फिर उसकी प्राप्ति के लिए श्रम क्यों किया जाये, यह प्रमादियों का अनर्गल प्रलाप है।

Scanned with CamScanner

मुक्ति की अवधि

एक प्रश्न यह भी उठता है कि जब मुक्ति से लौट कर आना ही है तो फिर वह मुक्ति कितने काल के लिए होती है ? महर्षि दयानन्द मुण्डक उपनिषद् के आधार पर मुक्ति से पुनरावृत्ति परान्त काल अथवा महा कल्प के पश्चात् बतलाते हैं। परान्त-काल एवं महाकल्प दोनों ही शब्द मुक्ति की अवधि के लिये प्रयुक्त होते हैं। इसकी गणना महर्षि ने दो प्रकार से समझाई है। एक इस प्रकार से कि तैतालीस लाख बीस हजार वर्ष की एक चतुर्युगी होती है। दो हजार चतुर्युगियों की एक अहोरात्र, ऐसे तीस अहोरात्रों का एक मास, ऐसे बारह मासों का एक वर्ष, और ऐसे सौ वर्षों का एक परान्तकाल होता है। इसका हिसाब लगाने से यह गणना इकत्तीस नील दस खरब चालीस अरब वर्ष बनती है। महर्षि ने इसकी गणना एक अन्य प्रकार से भी की है। वह यूं कि छत्तीस हजार बार सृष्टि और छत्तीस हजार बार प्रलय का मिलाके जितना समय होता है, उतने समय तक मुक्त जीव मुक्ति का आनन्द भोगता है। चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष सृष्टि के और चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष प्रलय के होते हैं। यह कुल मिला के आठ अरब चौंसठ करोड़ वर्ष बनते हैं। इसको छत्तीस हजार से गुणा की जाये तो वही इकत्तीस नील, दस खरब, चालीस अरब वर्ष ब्रह्मलोक में निवास करने की आयु बनती है।

Scanned with CamScanner

मुक्ति में जीवात्मा की स्थिति

मुक्तावस्था में जीवात्मा की कैसी स्थिति होती है ? उसका स्वरूप कैसा होता है ? मुक्ति में जीवात्मा विद्यमान रहता है या ब्रह्म में लीन हो जाता है ? मुक्ति में जीव कहाँ रहता है और कैसे विचरता है ? क्या मुक्तात्माओं के लिए कोई अलग लोक है ? मुक्ति में जीवात्मा के साथ शरीर रहता है कि नहीं ? और बिना स्थूल शरीर के वह मुक्ति का आनन्द कैसे भोगता है ? सत्यार्थप्रकाश के इस महत्त्वपूर्ण समुल्लास में महर्षि ने ऐसे ही अनेकों विषयों की विशद् विवेचना की है। यहाँ उन सब विषयों की चर्चा करनी स्थानाभाव के कारण सम्भव नहीं। फिर भी यहाँ कुछेक विषयों की चर्चा कर रहे हैं। विशद् अध्ययन तो सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय से ही सम्भव हो सकता है।

क्या मुक्ति में जीव ब्रह्म में लय हो जाता है ?

महर्षि दयानन्द आधुनिक वेदान्तियों की भांति मुक्ति में जीवात्मा का ब्रह्म में लय होना नहीं मानते। उनके अनुसार मुक्ति में जीव ब्रह्म-मय तो हो जाता है पर ब्रह्म नहीं हो जाता। तात्पर्य यह कि मुक्ति में जीव अपना अस्तित्व नहीं खो बैठता। उनका इसमें तर्क है कि यदि मुक्ति में जीव का ब्रह्म में लय हो जाना माना जाये तो फिर मुक्ति का आनन्द ही कौन भोगेगा ? महर्षि तो ऐसी स्थिति को "जीव का प्रलय अर्थात् नाश" ही मानते हैं। उनका कथन है कि "ब्रह्म में लय होना समुद्र में डूब

Scanned with CamScanner

मरना है।" जिस मोक्ष की प्राप्ति के लिये इतनी कठिन तपश्चर्या एवं साधना का अनुष्ठान किया जाता है, उसकी प्राप्ति हो जाने पर उस मोक्षानन्द के भोक्ता जीव का नाश हो जाये तो फिर मोक्ष के उन साधनों एवं अनुष्ठानों की क्या उपयोगिता रह जायेगी ? और उस आनन्द को भोगेगा कौन ? अतः यही मानना युक्तियुक्त है कि मोक्ष में जीव का ईश्वर में लय नहीं होता। लय होने में मुक्ति से पुनरावृत्ति का सिद्धान्त भी बाधक है। क्योंकि यदि लय हो जाय तो फिर पुनरावृत्ति कैसे हो सकती है ? लय होना मानने से मुक्ति को भी अनन्त मानने लग जाते हैं जो कि सिद्धान्त विरुद्ध एवम् अव्यावहारिक है। क्योंकि जैसा कि पूर्व भी लिख आये हैं कि प्रत्येक सादि पदार्थ सान्त भी अवश्य ही होता है। जीव का ब्रह्म में लय हो जाना मानने से जीव भी अनित्य हो जायेगा और सिद्धान्त हानि होगी। नवीन वेदान्तियों की यह कल्पना कि ब्रह्म और जीव में कोई अन्तर नहीं, अतः जीव के बन्ध और मोक्ष आदि सब काल्पनिक जगत् के विचार हैं, सर्वथा निराधार बैठती है। सारांश में यही मानना युक्तियुक्त है कि मोक्षावस्था में भी जीव ब्रह्म में लय नहीं होता।

क्या मोक्षधारियों के लिये कोई अलग लोक है ?

मुक्तात्माओं के लिए एक अलग स्वर्ग अथवा ब्रह्म लोक की मिथ्या कल्पना कर ली गई है और ऐसा माना जाने लगा है कि सभी मुक्तात्मा उसी स्वर्ग अथवा ब्रह्म लोक में ही रहते हैं और

Scanned with CamScanner

वह लोक भी कहीं ऊपर आकाश में स्थित है। ऐसी मान्यता सर्वथा दोषपूर्ण एवं मिथ्या है। वैदिक मान्यतानुसार स्वर्ग स्थान-विशेष का द्योतक न हो कर स्थिति-विशेष का द्योतक है। वस्तुतः सर्वत्र व्यापक ब्रह्म में विचरना ही ब्रह्मलोक में विचरना है। यदि मुक्तात्माओं के लिये किसी स्थान का बंधन बना रहेगा तो फिर वे मुक्त ही क्या हुए? अतः यह मानना कि मोक्षधारियों के लिए कोई अलग लोक है, एक मिथ्या-कल्पना एवं निराधार धारणा है।

फिर वह मुक्त जीव कहां रहता और कैसे विचरता है?

ब्रह्म जो सर्वत्र व्यापक हो रहा है, वही मोक्ष पद कहाता है। मुक्तात्मा उसी को प्राप्त होते हैं। उसी में मुक्त जीव अव्याहत गति से स्वच्छन्दतापूर्वक बेरोक-टोक सर्वत्र विचरता है।

मुक्ति में जीवात्मा के साथ किसी प्रकार का शरीर रहता है कि नहीं?

महर्षि दयानन्द मुक्ति में जीवात्मा के साथ किसी प्रकार के भौतिक शरीर (स्थूल तथा सूक्ष्म) को नहीं मानते। किन्तु जो स्वाभाविक गुणरूप अभौतिक शरीर होता है उसकी विद्यमानता स्वीक रते हैं। उनकी मान्यता है कि मुक्ति में जीव के स्वाभाविक गुण, सामर्थ्य तथा संकल्प आदि रहते हैं भौतिक संग नहीं।

Scanned with CamScanner

बिना भौतिक शरीर के मुक्ति जीव मोक्षानन्द का भोग कैसे करता है ?

इसमें महर्षि दयानन्द का कथन है कि वह अपने स्वभाविक शुद्ध गुणों एवं सत्य संकल्पों से ही उस आनन्द का भोग कर लेता है। शतपथ ब्राह्मण के आधार पर वे ऐसा मानते हैं कि जब सुनना चाहता है, तब श्रोत्र, स्पर्श करना चाहता है तब त्वचा, देखने के संकल्प से चक्षु, स्वाद के अर्थ रसना, गन्ध के लिए घ्राण, संकल्प-विकल्प करने के समय मन, निश्चय करने के लिए बुद्धि, स्मरण के लिए चित्त और अंहकार रूप ही स्वशक्ति से जीवात्मा मुक्ति में हो जाता है। जीव अपनी संकल्प शक्ति से ही ब्रह्म में सर्वत्र स्वच्छन्द विचरता हुआ आनन्द का उपभोग करता है। महर्षि का कथन है कि "जैसे सांसारिक सुख शरीर के आधार से भोगता है, वैसे परमेश्वर के आधार मुक्ति के आनन्द को जीवात्मा भोगता है।" मुक्ति में महर्षि दयानन्द जीव की 24 प्रकार की विशेष शक्ति अथवा सामर्थ्य मानते हैं जिन्हें हम विस्तार भय से यहां नहीं दे रहे।

मोक्ष के साधन

मोक्ष के स्वरूप आदि की विवेचना करने के पश्चात् उसके प्राप्ति के साधनों की चर्चा करना आवश्यक है। क्योंकि जिस मोक्ष की इतनी चर्चा की गई है, इतना महत्त्व दर्शाया गया है, यदि उसकी प्राप्ति के साधनों की चर्चा न की जाये तो यह चर्चा ही अधूरी रह जायेगी। मुक्ति के स्वरूपादि की भांति उसके

Scanned with CamScanner

साधनों के सम्बन्ध में भी आस्तिक जगत् में बहुत भ्रांतिया व्याप्त हैं। कोई मोक्ष प्राप्ति के साधन कुछ बताता है तो कोई कुछ। पर एक बात की चर्चा आज सर्वाधिक सुनाई देती है। जिसका आधार तुलसी का निम्न पद है—"कलियुग केवल नाम आधारा, सुमिर-सुमिर नर उतरहि पारा।" तात्पर्य यह कि कलियुग में मोक्ष प्राप्ति का एकमात्र साधन ईश भक्ति को ही समझा जाने लगा है। प्रथम तो यही बात विचारणीय है कि भिन्न-भिन्न युगों के लिये मुक्ति के साधन भी भिन्न-भिन्न हुआ करते हैं ? तर्क और प्रमाण इसके विपरीत जाते हैं। मोक्ष के साधन सब कालों के लिए एक से होने चाहिये, भिन्न-भिन्न नहीं। जो साधन सतयुग तथा अन्य युगों के लिए आवश्यक हैं, वही कलियुग के लिये भी। अतः कलियुग के लिये केवल नामाधार की बात कहना युक्तियुक्त नहीं और फिर नाम स्मरण की बात भी कुछ विचित्र ढंग से प्रस्तुत की जाती है। यथा-"तुलसी अपने राम को रीझ भजो या खीझ, उलटे सीधे उपजेंगे पड़े भूमि में बीज।" आश्चर्य तो तब होता है कि जब इसी आधार पर 'मरा-मर' की निरन्तर रट से 'राम-राम' हो जाने की बात कह लोग स्वर्गलोग की प्राप्ति का मिथ्या प्रचार करने में भी नहीं झिझकते। हम प्रभु के नाम के स्मरण का खण्डन अथवा निषेध नहीं करते। हम ही नहीं कोई भी आस्तिक ऐसा नहीं कर सकता। जब योगदर्शनकार स्वयं ईश्वर के पवित्र नाम के

Scanned with CamScanner

जप की बात कहता है तो फिर हम उसका निषेध कैसे कर सकते हैं। हमारा तो यही कहना है कि जप की जो विधि है एवं जो प्रक्रिया महर्षि पतंजलि बता गये हैं, उसको अपनाये बिना जप करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। महर्षि पतंजलि की सुस्पष्ट मान्यता है कि पहले अपने उपास्य के सर्वगुण-सम्पन्न मुख्य एवं निज नाम को जानों, फिर जप करो और जप भी उलटा-सीधा नहीं, अर्थ का चिन्तन करते हुए करो। महर्षि दयानन्द का भी ऐसा ही कथन है। पर आज अर्थ-चिन्तन को छोड़ कर ही लोग अनाप-शनाप उलटे-सीधे ढंग से जपने लग गये हैं और चाहते हैं कि मोक्ष प्राप्त हो जाये। योगदर्शनकार ऋषि तो अर्थ-चिन्तन मात्र से ही संतुष्ट नहीं होते। वे तो चित्त की वृत्तियों का निरोध करना भी जप के लिए आवश्यक समझते हैं। फिर भी यहां मुख्य प्रश्न यह नहीं कि नाम स्मरण कैसे किया जाये। मुख्य प्रश्न तो यह है कि क्या नाम स्मरण मात्र से ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है या नहीं? शायद ऐसा समझना वास्तविकता से इन्कार करना होगा। नाम स्मरण अर्थात् उपासना से पूर्व ज्ञान और कर्म की आवश्यकता होती है। आज इन दोनों को सर्वथा उपेक्षा कर सीधे उपासना की बात कही जाने लगी है जो सर्वथा असंगत है। मानव जीवन का चरम लक्ष्य एवं परम पुरुषार्थ दुःखों से छुटकारा पा परमानन्द को प्राप्त करना है। जिसे पाना है उसका प्रथम

Scanned with CamScanner

ज्ञान एवं उसकी प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ आवश्यक क्यों नहीं—यह हमारी समझ में नहीं आता।

ईश्वर, जिसे जीव प्राप्त करना चाहता है, न स्थान की दृष्टि से दूर है और न काल की दृष्टि से। बस दूर है तो केवल ज्ञान की दृष्टि से। अज्ञान का आवरण ही उसे हमसे दूर रखे हुए है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि वह अज्ञान का आवरण दूर किया जाए। अविद्या आदि गांठों को योगाभ्यास द्वारा काट के ही मुमुक्षु मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। जब अविद्या रूपी गांठ कट जाती है, तब सब संशय मिट जाते हैं और दुष्ट कर्मों का क्षय हो जाता है, तभी अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहे परमात्मा में जीव निवास करता है। यही परमपद प्राप्ति अथवा मोक्ष प्राप्ति है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए ज्ञान, कर्म, उपासना और योग एवं धर्म के सम्यक् अनुष्ठान की एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है, जिसे अपना कर कोई भी मुमुक्षु मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में माक्ष-प्राप्ति के कुछ अनुभूत साधन लिखे हैं। वहां जो चार प्रमुख साधन बताये गये हैं वे हैं—विवेक, वैराग्य, षटक् सम्पत्ति तथा मुमुक्षुत्व। इनके अनन्तर महर्षि ने चार अनुबन्धों की भी चर्चा की है एवं उन्हें मुमुक्षुओं के लिए आवश्यक बताया है। (देखें—स० प्र० नवम समुल्लास) फिर श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार जो श्रवण-चतुष्ट्य कहलाता है, उसका अनुष्ठान आवश्यक है। मुमुक्षु को

Scanned with CamScanner

तमोगुण और रजोगुण से बचकर सतोगुण को अपनाना होता है। महर्षि ने मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा आदि का अनुष्ठान करते हुए मुमुक्षु के लिए कम से कम दो घण्टे नित्य ध्यान का विधान किया है। यह एक योगी तथा साक्षात्कृत-धर्मा ऋषि का अनुभूत विधान है। इसे हम मोक्ष प्राप्ति का राजमार्ग कह सकते हैं।

अन्त में हम यही कहेंगे कि मोक्ष का जो तात्विक विवेचन महर्षि दयानन्द ने किया है, वह अपने में पूर्ण ही नहीं, सर्वथा अनूठा, अनुपम और अद्वितीय है। हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं कि मोक्ष सम्बन्धी जो विचार महर्षि दयानन्द ने व्यक्त किये हैं एवं मोक्ष की जो परिभाषा, स्वरूप, स्थिति तथा साधन आदि बताये हैं वे अन्य साम्प्रदायिक आचार्यों द्वारा प्रतिपादित मोक्ष सम्बन्धी विचारों की तुलना में अधिक तर्क-पूर्ण, युक्तिसंगत, बुद्धिगम्य, वैज्ञानिक तथा वेदानुकूल हैं। आवश्यकता इस बात की है कि उनके इन तार्किक, युक्तियुक्त वैदिक विचारों का पूर्वाग्रहमुक्त गम्भीर अध्ययन किया जाये और संसार को यह बताया जाये कि मोक्ष का जो वैदिक मार्ग महर्षि दयानन्द बता गये हैं उस पर चले बिना कल्याण नहीं।

ओ३म् ओ३म्

आचार्य धर्मपाल आर्य

(बाहरी आवरण का शेष)

5. स्वामी जी के पत्र व्यवहार पर आधारित उनके कार्य और विचारों का संकलन ।
6. आर्य समाज अजमेर गत 100 वर्षों का इतिहास जिसमें ऋषि दयानन्द के अन्तिम वर्षों से सम्बन्धित समाज के अभिलेखों से प्राप्त विवरण ।
7. उपर्युक्त प्रकाशन में आर्थिक सहायता देने वाले सज्जनों के संबंध में प्रत्येक पुस्तक में निम्न प्रकार से उनके प्रति आभार व्यक्त किया जावेगा:—

**एक सौ रुपये से पांच सौ रुपये तक दान देने वालों के नाम का उल्लेख

* 500 रुपये से 3000 तक देने वाले दान दाताओं का संक्षिप्त परिचय ।

* 3000 रु. से ऊपर देने वाले दान दाताओं का चित्र और परिचय ।

दयानन्द पीठ के प्रकाशन

दयानन्द स्नातकोत्तर कालेज में इसी वर्ष से दयानन्द पीठ की स्थापना की जा रही है । प्रति वर्ष उसकी ओर से नियमित रुप से महर्षि दयानन्द के सिद्धांतों एवं मन्तव्यों पर महत्वपूर्ण शोध किया जायेगा तथा प्रकाशन संस्थान के लिए 500 रुपये या अधिक दान देने वाले सज्जनों के नाम प्रत्येक प्रकाशन तथा शिलालेखों में अंकित किये जायेंगे ।

ई वैदिक पुस्तकालय मुम्बई

सम्पर्क - 9029421718.

निवेदक
मंत्री

आर्य समाज, अजमेर

Scanned with CamScanner

सुदन्र, साहित्य और सस्ते साहित्य प्रचार की योजना में सहयोग दीजिए

आर्य समाज अजमेर के निष्ठावान् विद्वान् मंत्री डा० सूर्यदेव जी की 22 हजार रुपयों की उदार सहायता के कारण आर्यसमाज अजमेर ने 50 हजार रुपये व्यय करके सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थमाला के 15 भागों की 75 हजार प्रतियां (प्रथम संस्करण) लागत से भी कम मूल्य पर वितरित की हैं। अब इस ग्रन्थमाला के दूसरे संस्करण के लिए आर्य समाज अजमेर की ओर से पर्याप्त धन राशि व्यय की जा रही है और आर्यसमाज अजमेर द्वारा अपनी स्थापना तथा ऋषि दयानन्द की निर्वाण शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किए जाने वाले निम्नलिखित अत्यन्त उपयोगी साहित्य के लिये आप भी आर्थिक सहायता देकर उनके प्रचार प्रसार में योगदान करें :—

1. स्व. लाला लाजपतराय की प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक—**"दी आर्य समाज"** का पहली बार प्रकाशित होने वाला डा० भवानी लाल भारतीय द्वारा अनूदित हिन्दी संस्करण।

2. आर्य समाज—हिन्दु विदाऊट हिन्दुइज्म (The Arya Samaj Hindu without Hinduism) प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक-प्रकाशक विकास पब्लिकेशन द्वारा मुद्रित एवं प्रिंसिपल दत्तात्रेय वाब्ले द्वारा लिखित क्रान्तिकारी मौलिक अंग्रेजी ग्रन्थ।

3. सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थमाला (15 भाग) का दूसरा संस्करण।

4. इसी ग्रन्थमाला के समान ऋषि दयानन्द तथा वैदिक सिद्धांतों के सम्बन्ध में हिन्दी अंग्रेजी ट्रैक्टस।

(शेष भीतरी आवरण पर)

Scanned with CamScanner